सांप्रदायिकता को चित्रों के साथ समझना

पल्लव

'सांप्रदायिकताः ए ग्राफिक एकाउंट'
राम पुनियानी एवं शरद शर्मा
वाणी प्रकाशन, 21-ए, नई दिल्ली-110002
मूल्य : 250 रुपये

सांप्रदायिकता क्या है? इससे क्यों चिंतित होना चाहिए? भारत में अक्सर राजनैतिक पार्टियां एक-दूसरे को सांप्रदायिक और खुद को धर्म निरपेक्ष कहती हैं, इसका क्या मतलब है? और इन सब बातों का शिक्षा और शिक्षण से भी कोई संबंध बनता है तो वह क्या है? राम पुनियानी की नई किताब 'सांप्रदायिकताः ए ग्राफिक एकाउंट' आई है और उनकी पिछली किताबों की तरह ही सांप्रदायिकता के विभिन्न सवालों से जिरह करने वाली है। सवाल यह भी होता है कि एक ही विषय पर कोई लेखक कितना लिखेगा? और बार-बार वैसी ही बातें लिखने पर क्या उसका लिखा प्रभावी रह सकेगा? मेरा जवाब है कि यह समस्या पर निर्भर करता है। यदि हम भ्रष्टाचार के प्रति गंभीर हैं और चाहते हैं कि वह खत्म हो, उस पर हमारा समाज पहल करे तो उसके लिए समाज में गंभीर बहस चलानी होगी। ठीक ऐसा ही सांप्रदायिकता के साथ भी है। सांप्रदायिकता खतरनाक इसलिए ही नहीं है कि इसके चलते कुछ ऐसे दल सत्ता में आ सकते हैं जो अपने विचारों में बेहद कट्टर हैं अपितु इसलिए कि सांप्रदायिकता ने हमारे देश को बहुत नुकसान पहुंचाया है और इसके अंदेशे अभी भी कायम हैं। भारत का विभाजन और विभाजन से पहले और बाद में हुए बड़े-बड़े दंगों का मूल कारण सांप्रदायिकता था। सांप्रदायिकता इस कुतर्क के साथ फैलती है कि मेरे धर्म या संप्रदाय का हित तुम्हारे सम्प्रदाय से भिन्न है इसलिए हम एक-दूसरे के मित्र हो ही नहीं सकते। यह बात कुत्सित ढंग से जब चलाई जाती है तब उन्माद फैलता है और लोग एक-दूसरे के दुश्मन बन जाते हैं। शिक्षा की इसमें बड़ी भूमिका है क्योंकि बचपन से यदि अध्यापक इन भ्रांत धारणाओं को मिटाता चले तो समुदायों के बीच नफरत घटेगी। भारत में यह मसला और भी गंभीर है क्योंकि यहां केवल दो, तीन, चार धर्मों का मामला ही नहीं अपितु एक धर्म के भीतर मौजूद अनेक जातियों और क्षेत्रों के बीच वैमनस्य और कटुता से भी दो हाथ करने हैं। फिर जो नफरत और कटुता दैनंदिन जीवन में लगातार - बार-बार फैलाई जा रही हो उससे निबटने में राम पुनियानी जैसे अनेक लेखकों की सैकड़ों किताबें भी कम हैं।

इस नई किताब का आकर्षण है चित्र और कार्टून के मार्फत विषय को रोचक और प्रभावी ढंग से पाठक तक संप्रेषित करना। बाबरी मस्जिद विध्वंस से प्रारंभ हुई इस किताब में कुल तेईस अध्याय हैं और छह परिशिष्ट। पुनियानी ने पुस्तक लेखन हेतु प्रश्नोत्तर शैली अपनाई है जो समस्या को एकांगी दृष्टि से देखने से बचाती है। मसलन पहला सवाल ही है 'बाबरी मस्जिद का गिराया जाना भयानक था लेकिन मेरे दोस्त कहते हैं कि वह मस्जिद नहीं थी। वह तो विवादास्पद ढांचा था।' इस मिथक का वे अत्यंत तार्किक ढंग से (तिथि-प्रमाण सहित) उत्तर देते हैं। इसी तरह वे एक और अप्रिय मिथक से मुठभेड़ करते हैं

कि अस्मिताओं की टकराहट तब पैदा होती है जब किसी एक अस्मिता को ही अपनी अस्मिता मान लेते हैं। इंसान बहु-अस्मिताएं अपने साथ लिए चलता है जिसमें लिंग, धर्म, जाति, प्रदेश, भाषा आदि अस्मिताएं शामिल होती हैं। सांप्रदायिकता की समस्या भी एक अस्मिता पर अतिरिक्त बल देने से उत्पन्न होती है। 'दंगे कौन शुरू करता है' इसके उत्तर में वे 1969 के अहमदाबाद, 1970 के भिवंडी, 1971 के तेल्लीचेरी, 1979 के जमशेदपुर और 1982 के कन्याकुमारी के कुख्यात दंगों के बाद बैठे जांच आयोगों के निर्णयों को उद्धृत कर वस्तुस्थिति से अवगत करवाते हैं। गोधरा काण्ड और उसके बाद हुए गुजरात नरसंहार पर भी इसी तार्किक विवेचन को पढ़ना पाठकों को जिम्मेदार बनाता है। कश्मीर के उलझे हुए मसले और इस कारण दो समुदायों में नफरत फैलाने की हरकत पर वे एक पूरा अध्याय लिखते हैं। पुनियानी सांप्रदायिकता के कारणों और नकारात्मक राजनीति की चर्चा ही नहीं करते अपितु वे भारतीय समाज की समन्वयवादी संस्कृति के ऐसे दुर्लभ उदाहरण लाते हैं जिनसे कोई भी जान सके कि भारतीयता वस्तुतः बहुलता से ही निर्मित होती है। भक्ति आंदोलन, हिन्दी-उर्दू आदि सवालों से गुजरते हुए वे सवाल करते हैं - 'भारतीय संस्कृति हिन्दू संस्कृति है। इस्लाम और ईसाइयत जैसे धर्मों ने हमारी संस्कृति पर ''हमला'' किया है और अब जवाब देखें - 'इसके विपरीत हमारी संस्कृति बहुलता लिए हुए है। यह देश की विविधता को अपने में समेटे हुए है। इसने यहां पर आकर बसे लोगों से बहुत कुछ लिया है। हिंदुओं के भी बहुत से संप्रदाय हैं और उनकी संस्कृति एक रूप नहीं है। केवल अभिजनों की संस्कृति को हिंदू संस्कृति कहा जाता है इसमें से दलितों की संस्कृति को बाहर निकाल दिया जाता है।' इसी तरह एक और मिथक 'हमारा हिंदू राष्ट्र पांच हजार साल पुराना है' का उत्तर देखिए - 'यह भ्रांत धारणा है क्योंकि राष्ट्र आधुनिक युग की देन है, पहले राजशाही हुआ करती थी। लगभग चार शताब्दी पहले यूरोप में पहली बार राजशाही का स्थान राष्ट्रों ने लिया।' आगे वे इस कथन के संदर्भ में विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करते हैं जो अपने-आपमें गंभीर शिक्षाप्रद है।

लेखक

पल्लव

लगभग एक दशक से हिन्दी साहित्य का अध्यापन, हिन्दी की लघु पत्रिका 'बनास जन' के संपादक। संप्रति : हिन्दू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में साहित्य के प्राध्यापक हैं।

पुस्तक को अद्यतन बनाने की पूरी कोशिश की गई है और इसके लिए वे सच्चर कमेटी की सिफारिशों का अध्ययन करते हुए इक्कीसवे अध्याय में महत्त्वपूर्ण तथ्यों और सूचनाओं से मुस्लिम समुदाय के प्रति मौजूद पूर्वाग्रहों को साफ करने की कोशिश की है, पुनियानी या कोई भी समझदार आदमी इस बात को बार-बार कहता है कि भारत पाकिस्तान की मौजूदा मुश्किलों के लिए बार-बार एक-दूसरे को दोष देना और अतीत में जाना बेमानी है। कोई कट्टर विचार कितना भी दुष्प्रचार करे लेकिन इतिहास की बीती सचाइयों को झुठलाना या उन्हें दुहराना असंभव है। ऐसे में बेहतर है कि समुदायों के बीच किसी भी विद्वेषी विचार को समाप्त कर साथ-साथ तरक्की करने का उत्साह भरा जाए। पुनियानी इतिहास की कड़वी मिसालों के बरक्स सौहार्द्र के सुंदर उदाहरण भी खोजते हैं जिनसे समन्वय और बहुलता के विचार को पुष्टि मिल सके। वे पुस्तक में कई स्थानों पर छोटे-छोटे बॉक्स बनाकर ऐसे तथ्यों को हाइलाइट करते हैं। जैसे वे बताते हैं कि शिवाजी के मुख्य सेनापति, विदेश सचिव और विश्वासपात्र सेवक क्रमशः दौलत खान, मुल्ला हैदर और मदानी मेहतर थे। राष्ट्र नायकों की अपने-अपने पक्ष में गढ़ी जाती कट्टरतावादी छवियों को मानवीय चेहरा देने का यह प्रयास अपने में सेकुलर शिक्षा ही कहलाएगा। इसी तरह वे औरंगजेब के वे उदाहरण देते हैं जो उसे कोरा मूर्ति भंजक शासक की छवि में कैद नहीं रहने देते। पुस्तक में हिंदुत्व की पैरोकारी करने वाले संगठनों के सिद्धान्तों - व्यवहारों की भी चर्चा की गई है। स्त्री और दलितों के संबंध में इन संगठनों के इतिहास की कारकर्दगी पाठकों को सावधान करती है और यहां पुनियानी ने कोई भी ब्यौरा बगैर प्रमाण के नहीं दिया है। मुस्लिम जनसंख्या के मिथक और गांधी हत्या के बहाने नफरत की राजनीति करने वाली ताकतों पर ऐसा तथ्यात्मक और सहज विवरण अन्यत्र नहीं मिलता।

शरद शर्मा के कार्टून इस पुस्तक को अधिक बोधगम्य बनाने वाले हैं तो पुनियानी विषय को स्पष्ट करने के लिए गहराई तक जाते हैं और पाठक के मन में किसी संदेह का सूराक तक नहीं छोड़ते। इस किताब को ऑक्सफेम इंडिया ने विशेष रूप से प्रकाशन सहयोग दिया है। क्या ही अच्छा हो कि भारत के हर स्कूल में यह पुस्तक जाए और हम भारतीय एक-दूसरे के प्रति अधिक प्रेम और सम्मान की भावना बना सकें। ◆